R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य-4 रुपये, वर्ष-22, अङ्क-3 मार्च 2022

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

चैतन्य गुफा में मुनिवर बसते.....

श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ द्वारा

तीर्थधाम मङ्गलायतन में संचालित

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन

20वाँ प्रवेश साक्षात्कार शिविर सत्र 2022-23

(शनिवार, 26 मार्च से गुरुवार, 31 मार्च 2022)

अनादिनिधन जैनशासन एवं परम उपकारी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग से तीर्थधाम मंगलायतन में श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट द्वारा भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन का सफल संचालन विगत 20 वर्षों से किया जा रहा है। भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन का पावन उद्देश्य—पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा प्रतिपादित वीतरागी तत्त्वज्ञान के प्रति बालकों में रुचि जागृत कर निज आराधनापूर्वक आत्मसात्कर जन-जन तक पहुँचाने का सत्प्रयास किया जा रहा है। अनवरत उसी शृंखला में 20वाँ आध्यात्मिक प्रवेश साक्षात्कार शिविर **शनिवार, 26 मार्च से गुरुवार, 31 मार्च 2022** तक आयोजित किया जा रहा है। जिसमें आप श्री सादर आमन्त्रित हैं।

दैनिक कार्यक्रम

प्रात:	05.30 से 06.30	जागरण / स्नानादि	- प्रवेशार्थी छात्र
	06.30 से 08.15	जिनेन्द्र अभिषेक / पूजन	- बाहुबली मन्दिर
	09.15 से 10.45	सी.डी. प्रवचन	- स्वाध्याय भवन
	10.50 से 11.30	स्वाध्याय (विद्वान द्वारा)	- स्वाध्याय भवन
	10.50 से 11.30	धार्मिक कक्षा	- महावीर मन्दिर
दोपहर	02.00 से 02.45	स्वाध्याय	- स्वाध्याय भवन
	02.00 से 02.45	धार्मिक कक्षा	- महावीर मन्दिर
	03.00 से 04.45	खेल	
	06.15 से 07.00	जिनेन्द्र भक्ति	- बाहुबली मन्दिर
रात्रि	07.10 से 09.30	प्रतियोगिताएँ	- स्वाध्याय भवन

विद्वत् सान्निध्य : बालब्रह्मचारी कल्पना बहिन, जयपुर; डॉ. योगेश जैन, अलीगंज।

स्थानीय विद्वान् : पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित सचिन जैन, पण्डित सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र जैन, पण्डित समकित जैन, मङ्गलार्थी छात्र इत्यादि।

मुख्य आकर्षण :

शिविर शोभायात्रा, ध्वजारोहण, शिविर उद्घाटन सभा, भजन, भाषण, प्रतिभा प्रदर्शन प्रतियोगिता इत्यादि

कार्यक्रमस्थल : **तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़-आगरा राजमार्ग, सासनी-204216**

सम्पर्कसूत्र : पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, 7581060200

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-22, अङ्क-3 (वी.नि.सं. 2548; वि.सं. 2079) मार्च 2022

होली खेलें मुनिराज....

होली खेलें मुनिराज शिखर वन में
रे अकेले वन में, मधुवन में
मधुवन में आज मची रे होली मधुवन में..... ॥ टेक ॥

चैतन्य गुफा में मुनिवर बसते, अनन्त गुणों में केली करते
एक ही ध्यान रमायें वन में, मधुवन में..... ॥1 ॥

ध्रुवधाम ध्येय की धूनी लगाई, ध्यान की धधकती अग्नि जलाई
विभाव का ईधन जलावें वन में, मधुवन में..... ॥2 ॥

अक्षय घट भरपूर हमारा, अन्दर बहती अमृत धारा
पतली धार न भायी मन में, मधुवन में..... ॥3 ॥

हमें तो पूर्ण दशा ही चहिए, सादि अनंत का आनंद लहिये
निर्मल भावना भायी वन में, मधुवन में..... ॥4 ॥

पिता झलक ज्यों पुत्र में दिखती, जिनेन्द्र झलक मुनिराज चमकती
श्रेणी माँडी पलक छिन में, मधुवन में..... ॥5 ॥

नेमिनाथ गिरनार में देखो, शत्रुंजय पर पाण्डव देखो
केवलज्ञान लियो है छिन में, मधुवन में..... ॥6 ॥

बार-बार वन्दन हम करते, शीश चरण में उनके धरते
भव से पार लगाये वन में, मधुवन में..... ॥7 ॥

ऐसी होली हम हूँ खेले, निज आतम को हम हूँ देखें।
ज्ञान में ज्ञान रमायो पल में, मधुवन में ॥8 ॥

साभार : मङ्गल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़

सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सह सम्पादक
पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल
ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार
डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, अलीगढ़

इस अङ्क के प्रकाशन में
सहयोग-
स्व. श्री सुमतिचन्द्र एवं
माता श्रीमती इन्द्राणी देवी
की स्मृति में श्रीयुत अजय,
विजय, रतन, पवन जैन
मुम्बई-दिल्ली-हाथरस

क्या - कहाँ

ढाई द्वीप 5
श्री समयसार नाटक 14
जैन खगोल और 21
श्रुत परम्परा एवं.... 24
विद्वान परिचय शृंखला 26
प्रेरक-प्रसंग 29
जिस प्रकार—उसी प्रकार 30
समाचार-दर्शन 31

शुल्क :
वार्षिक : 50.00 रुपये
एक प्रति : 04.00 रुपये

ढाई द्वीप

अष्टाह्निका पर्व के विशेष अवसर पर

1. जम्बूद्वीप – मध्य लोक में, बिलकुल मध्य भाग में थाली आकार गोल, एक लाख महायोजन का है। उसमें 526 महायोजन का एक भरतक्षेत्र, एक ऐरावतक्षेत्र और उससे बत्तीस गुणा बत्तीस महाविदेहक्षेत्र, एक महामेरु पर्वत और छह भोगभूमियां हैं। इसका विस्तृत वर्णन तत्त्वार्थसूत्र–मोक्षशास्त्र से जानना।

2. धातकी खंडद्वीप – चार लाख महायोजन,

3. अर्ध पुष्कर द्वीप – आठ लाख महायोजन।

जम्बूद्वीप के चहुंओर चूड़ी आकार दो लाख योजन का लवण समुद्र है, धातकी खंड द्वीप के चहुंओर आठ लाख योजन का कालोदधि समुद्र है, उसके चहुंओर चूड़ी आकार 16 लाख योजन का पुष्करवर द्वीप में 8 लाख योजन तक की सीमा में 45 लाख महायोजन होता है (2000 कोस का एक महायोजन), यह ढाई महाद्वीप का सब क्षेत्र 'मनुष्यक्षेत्र–मनुष्य लोक' कहा जाता है क्योंकि सब प्रकार के मनुष्य इस ढ़ाई द्वीप में ही रह सकते हैं, इसके बाहर कोई भी मनुष्य कभी भी किसी विद्या, विमानादि द्वारा अथवा देवादिक के द्वारा बाहर नहीं जा सकता। इसलिये तीसरा पुष्करवर द्वीप के मध्य में चूड़ी के आकार में दो विभाग करनेवाला मानुषोत्तर नाम का महा पर्वत है जो स्वयं मनुष्य क्षेत्र की अंतिम सीमा है। *(त्रिलोकसार, गाथा 304 से 323)*

ढाई द्वीप की शाश्वत रचना का सामान्य वर्णन—

पाँच मेरुगिरी — (1) जम्बूद्वीप के बीच में एक लाख महायोजन ऊँचा सुदर्शनमेरु (2) धातकी खंड द्वीप में दो मेरु; 84 हजार महायोजन ऊँचा एक पूर्व दिशा में विजयमेरु दूसरा पश्चिम दिशा में अचलमेरु (3) अर्द्ध–पुष्करवर द्वीप में दो–पूर्व दिशा में मंदरमाली मेरु और पश्चिम दिशा में विद्युतमाली मेरु=कुल ढ़ाई द्वीप में 5 मेरु।

बत्तीस महाविदेहक्षेत्र — प्रत्येक मेरु पर्वत की पूर्व दिशा में दो श्रेणी के 16 खंडों (–विजय) और पश्चिम दिशा में भी उसी प्रकार 16 खंडों का महाविदेहक्षेत्र है। उस 32 खंडोंवाले पाँच महाविदेहक्षेत्र हैं। उन 160 खंडों में

भरतक्षेत्र (526 महायोजन) के समान एक-एक खंड में पाँच-पाँच अनार्य (म्लेच्छ) खंड है। ऐसे उन 160 क्षेत्रों में कालादि की व्यवस्था, भरतक्षेत्र के चतुर्थ काल के समान होती है। 32×5=160 आर्य खंड और 160×5=800 म्लेच्छखंड से विभाजित पाँच विदेहक्षेत्र ढ़ाई द्वीप में है।

(1) जम्बूद्वीप में दक्षिण दिशा में एक भरतक्षेत्र है; उत्तर दिशा में एक ऐरावतक्षेत्र है। धातकी खंड द्वीप में दो भरत और दो ऐरावतक्षेत्र है। उनका विस्तार भरतक्षेत्र से दूना-दूना है।

(2) ढ़ाई द्वीप में (45 लाख महायोजन की भू स्थल में 5 भरत, 5 ऐरावत, 5 विदेहक्षेत्र मिलकर 5+5+5=15 कर्मभूमि हैं।)

कर्म भूमि—जहां-असि=शस्त्रों द्वारा रक्षा का कार्य करनेवाला।

मसि=लेखन कार्य, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प यह छह प्रकार से आजीविका होय है, उसे कर्मभूमि कहते हैं और 30 भोगभूमि हैं, उनका उत्तम, मध्यम, जघन्य ऐसे तीन भेद हैं। वहाँ व्यापारादि षट्कर्म नहीं करने पड़ते हैं। किंतु 10 प्रकार के कल्पवृक्षों के द्वारा निर्वाह होता है।

(3) भरतक्षेत्र में—वर्तमान चौबीसी में दूसरे अजितनाथ स्वामी तीर्थंकर भगवान के समय में उत्कृष्ट धर्म काल और उत्कृष्ट संख्या में तीर्थंकर भगवान थे। पाँच विदेहक्षेत्र के 32×5=160 क्षेत्र के 160 तीर्थंकर, भरतक्षेत्र के पाँच और ऐरावतक्षेत्र के पाँच मिलकर 10 इसप्रकार 160+10=170 तीर्थंकर उस समय ढाई द्वीप में थे।

वर्तमान काल में तो पाँच विदेहक्षेत्रों में पाँच कल्याणक के स्वामी सिर्फ 20 तीर्थंकर ही विराजमान हैं। दो और तीन कल्याणक के धारक तीर्थंकर भी वहाँ उत्पन्न होते रहते हैं।

वर्तमान 20 विहरमान तीर्थंकर भगवंतों के नाम

(1) जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में चार-सीमंधर, युगमंधरस्वामी तो मेरु की पूर्व दिशा में प्रथम दो आर्य खंडों में हैं और बाहु, सुबाहु स्वामी मेरुगिरि के पश्चिम दिशा में समीप के दो आर्य खंडों में हैं।

धातकी खंड में दो मेरुगिरि संबंधी दो विदेहक्षेत्र में उपरोक्त विधि से 8

तीर्थंकर हैं—श्री सुजात-स्वयंप्रभ, ऋषभानन्-अजितवीर्य, श्री सूरप्रभविशाल-कीर्ति, श्रीवज्रधर-चन्द्रानन, 8 तीर्थंकर पुष्करार्ध द्वीप में हैं—श्री चंद्रबाहु-भुजंगम, श्री ईश्वर स्वामी-नेमिनाथ, श्री वीरसेन-महाभद्र, श्री देवयश-अजितवीर्य, उन सात तीर्थंकरों को परम भक्ति सहित मेरी त्रिकाल वंदना हो।

उन प्रत्येक तीर्थंकर का शरीर 500 धनुष ऊँचाईवाला; सात कुधातुओं से रहित, सब केवली भगवान को जन्म, जरा, तृषा, क्षुधा, विस्मय, अरति, खेद, रोग, शोक, मद, मोह, भय, निद्रा, चिंता, स्वेद, राग-द्वेष और मरण ये 18 दोष किंचित् भी नहीं होते। अक्रम, युगपत् अखंड ज्ञानदर्शन उपयोग होता है; प्रत्येक जिन केवलज्ञानी को 18 दोष रहितपना होता है। वहाँ पंचकल्याणक के धारक सब तीर्थंकरों का आयुष्य एक कोटि पूर्व का होता है। एक पूर्व के 7056,000,0000000 वर्ष अर्थात् सत्तर लाख कोटि और छप्पन हजार कोटि वर्ष।

विशेष में अजितनाथ भगवान के निर्वाण के समय में 170 तीर्थंकर ढाई द्वीप में थे तब उसी समय दो छह मास के संधिकाल से एक-एक मुहुर्त में 1216 जीव मोक्षदशा को प्राप्त हुए और आगे पीछे के दो छह मास में मोक्ष का अंतर पड़ा।

(बृ० जैन शब्दार्णव भाग-1 मास्टर विहारीदास चैतन्य बिजनोर द्वारा प्रकाशित श्री शांतिचंद जैन, पृष्ठ 181)

['णमो अरहंताणं' इस पद द्वारा तीनों काल के अनंत तीर्थंकरों और केवली भगवंतों को नमस्कार होता है, उसीप्रकार पाँचों परमेष्ठी में समझना।

'नमो' न बोलकर 'णमो' उच्चारण ही योग्य है कारण कि वह वर्ण अक्षर नाभिस्थान से-शरीर के मध्यस्थान से उत्पन्न होता है जो सर्वांग में उत्साह और चैतन्य की जागृति बताता है।

प्रश्न - पाँच पद में आचार्य, उपाध्याय और साधु हैं, वह सात तत्त्व में से कौन सा तत्त्व है? उत्तर-भावसंवर, भाव निर्जरातत्त्व। उनके नामांतर—मोक्षमार्ग, रत्नत्रयसाधकदशा, अपूर्ण निर्मलदशा, मोक्ष का साधन तत्त्व और गुरुतत्त्व है। अरहंत और सिद्धपद है, वह मोक्षतत्त्व, साध्यतत्त्व अर्थात् आत्मा की परिपूर्ण निर्मल दशा है; देवतत्त्व है।]

उत्तर
दक्षिण
अढ़ाई द्वीप
का
नक्शा

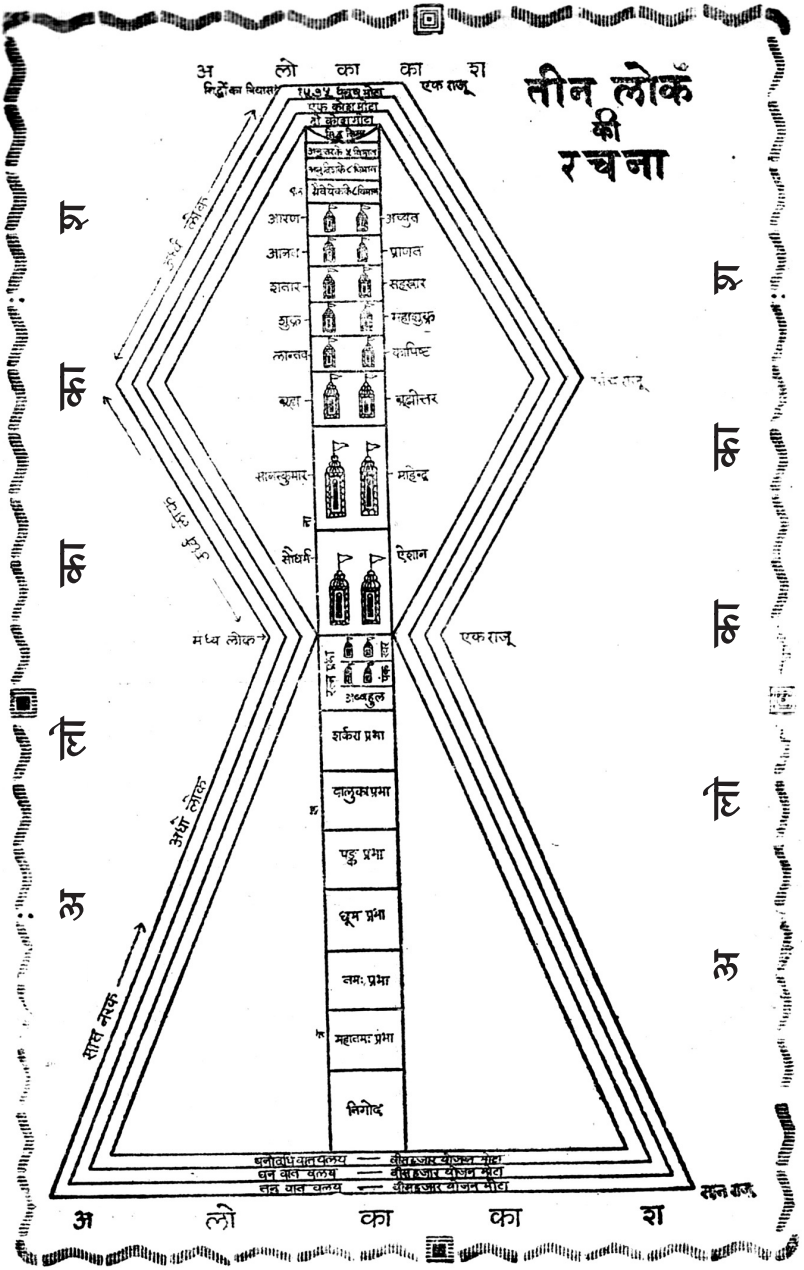

तीन लोक की रचना
अ लो का का श
सिद्धों का निवास
एक राजू
एक कोश मोटा
अनुत्तर के ५ विमान
अनुदिश के ९ विमान
ग्रैवेयक के ९ विमान
आरण
अच्युत
आनत
प्राणत
शतार
सहस्रार
शुक्र
महाशुक्र
लान्तव
कापिष्ट
ब्रह्म
ब्रह्मोत्तर
पाँच राजू
सानत्कुमार
महेन्द्र
सौधर्म
ऐशान
ऊर्ध्व लोक
मध्य लोक
एक राजू
अब्बहुल
शर्करा प्रभा
बालुका प्रभा
पङ्क प्रभा
धूम प्रभा
तमः प्रभा
महातमः प्रभा
निगोद
अधो लोक
सात नरक
घनोदधि वात वलय — बीस हजार योजन मोटा
घन वात वलय — बीस हजार योजन मोटा
तनु वात वलय — बीस हजार योजन मोटा
सात राजू
अ लो का का श
अ लो का का श
अ लो का का श

नोंध—160 विदेहक्षेत्र और उनमें नित्य विद्यमान 20 तीर्थंकरों और भरत-ऐरावत क्षेत्रों का वर्णन जानने के लिये त्रिलोक प्रज्ञप्ति ग्रंथ तथा नीचे चार्ट नं० 1-2 नोट सहित देखिये।

[आधार ब० जैन शब्दार्णव भाग-1 पता—श्री शांतिचंद्र जैन, पोस्ट बिजनौर (उ०प्र०)]

चार्ट नं० 1
जंबूद्वीप के सुदर्शन मेरु संबंधी विदेह क्षेत्र के 32 उपखंड

संख्या	विदेह के देश का नाम	राजधानी मुख्य नगरी	पूर्व विदेह का वर्णन
1	कच्छा	क्षेमा	यह आठ क्षेत्र सुदर्शन मेरु की पूर्व दिशा में सीता नदी के उत्तर किनारे पर और मेरु पर्वत के निकट भद्रशालवन की वेदी से लेकर लवण समुद्र के निकट देवारण्य की वेदी तक क्रम से पश्चिम से पूर्व पंक्तिबद्ध क्रमसर है। यह कच्छादि देशों का विभाग करनेवाला चित्रकूट, पद्मकूट, नलिन, एकशैल इन चार वक्षारगिरि और गंधवती, द्रहवती, पंकवती ये तीन विभंगा नदी है जो क्रम से एक नदी एक गिरि, एक नदी एक गिरि इस प्रकार उन आठ देशों के बीच में पड़कर उनकी सीमा और विभाग बताते हैं, उसको पूर्व विदेह कहते हैं।
2	सुकच्छा	क्षेमपुरी	
3	महाकच्छा	अरिष्टा	
4	कच्छकावती	अरिष्टपुरी	
5	आवर्त्ता	खंगा	
6	लांगलावती (मंगलावती)	मंजूषा	
7	पुष्कला	औषधी	
8	पुष्कलावती	पुंडरीकिणी	
9	वत्सा	सुसीमा	यह आठ क्षेत्र सुदर्शन मेरु की पूर्व दिशा के दक्षिण किनारे लवण समुद्र के निकट के देवारण्यवन की वेदी से मेरु के निकट के भद्रशाल वन की वेदी तक क्रमसर पूर्व से
10	सुवत्सा	कुण्डला	
11	महावत्सा	अपराजिता	
12	वत्सकावती	अभंकरा	

संख्या	विदेह के देश का नाम	राजधानी मुख्य नगरी	पूर्व विदेह का वर्णन
13	रम्या	अंका	पश्चिम है, यह वत्सादि देशों के बीच 2
14	सुरम्याका	पद्मावती	चित्रकूट, वैश्रवण, अंजनात्मा और अंजन यह
15	रमणीया	शुभा	चार वक्षार पर्वत हैं और तप्तजला, मत्तजल,
16	मंगलावती	रत्नसंचया	उन्मत्तजला ये तीन विभंगा नदी क्रम से एक पर्वत एक नदी इसप्रकार बीच में पड़कर उन देशों की परस्पर सीमा और विभाग बताते हैं उसको भी पूर्व विदेहक्षेत्र कहा गया है।
17	पद्मा	अवश्पुरी	**पश्चिम विदेह का वर्णन—**
18	सुपद्मा	सिंहपुरी	यह आठ उपखंड-विदेह क्षेत्र-सुदर्शन
19	महापद्मा	महापुरी	मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा नदी की
20	पद्मकावती	विजयपुरी	दक्षिण और मेरु के निकट भद्रशालवन की
21	शंखा	अरजा	वेदी से लवण समुद्र के निकट देवारण्य की
22	नलिनी	विरजा	वेदी तक क्रम से पूर्व पश्चिम है।
23	कुमदा	अशोका	यह पद्मा आदि देशों की पारस्परिक
24	सरिता (नलिनावती)	वीतशोका	सीमा सूचक श्रद्धावान, विजठवान, आशीविष, सुख वह यह चार वक्षारगिरि और क्षीरोदा, सीतादा, श्रोतोवाहनी ये तीन विभंगा नदी है जो एक गिरी और एक नदी, एक गिरी एक नदी, इसप्रकार क्रम से बीच में पड़कर उन आठ देशों की परस्पर सीमा और विभाग बताते हैं। (उसको पश्चिम विदेह कहा गया है।)
25	वप्रा	विजया	यह आठ उपखंड-विदेहक्षेत्र सुदर्शन

क्रमांक	विदेह के देश का नाम	राजधानी मुख्य नगरी	पूर्व विदेह का वर्णन
26	सुवप्रा	वैजयंती	मेरु की पश्चिम दिशा में सीतोदा नदी की उत्तर और लवण समुद्र के समीप देवारण्यवन की वेदी से मेरु पर्वत के समीप के भद्रशालवन की वेदी तक क्रमबद्ध पश्चिम और पूर्व है। यह वप्रादि विजय नामक देशों का परस्पर विभाग बतानेवाले चंद्रमाल, सूर्यमाल, नागमाल, देवमाल यह चार वक्षार पर्वत, तथा गंभीरमालिनी, फेनमालिनी, ऊर्मिमालिनी यह तीन विभंगा नदी उनकी बीच-बीच सीमा के ऊपर एक-एक पर्वत एक-एक नदी इसप्रकार क्रमसर है, यह पद्मा आदि १६ विदेह देश मेरुगिरि की पश्चिम दिशा में होने से पश्चिम विदेहक्षेत्र कहा गया है।
27	महावप्रा	जयंता	
28	वप्रकावती	अपराजिता	
29	गंधा (वल्गु)	चक्रपुरी	
30	सुगंधा (सुवल्गु)	खड़्गपुरी	
31	गंधिला	अयोध्या	
32	गंधमालिनी (गंधलावती)	अवध्या	

नोंध:—इसप्रकार यह जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र के 32 उपखंड हैं, उसमें उत्कृष्ट तो 32 तीर्थंकर होते हैं और जघन्य काल में चार तीर्थंकर होते हैं। सीमंधर आदि जो 20 नाम हैं, वह तो शाश्वत हैं। 32 देशों में किसी न किसी देश में उस नाम के तीर्थंकर होते ही हैं। आज वर्तमान जम्बूद्वीप के मेरु समीप पूर्व पश्चिम दिशा के दो-दो देशों में क्रमसर चार तीर्थंकर सीमंधर, युगमंधर, बाहु, सुबाहु है। इसप्रकार धातुकी खंड द्वीप और पुष्करार्ध द्वीप के 2+2=4 मेरु के संबंध में जानना। उपरोक्त 160 विदेहक्षेत्रों में जिसप्रकार तीर्थंकरों की संख्या कम से कम 20 और उत्कृष्ट 160 होती है। कभी भी 20 से कम नहीं हो सकती। इसप्रकार अर्धचक्री (नारायण-प्रतिनारायण) का भी समझना। (नारायण का दूसरा नाम वासुदेव है, यह पदवी का नाम है।) *(बृ० जैन शब्दार्णव प्रथम भाग में से)*

चार्ट नं० 2

ढाई द्वीप के पाँच मेरु संबंधी पाँच विदेहक्षेत्रों के 160 विजय-विदेह खंड उनमें से 20 क्षेत्र में 20 तीर्थंकर विद्यमान हैं, उनका वर्णन:—

नं.	नाम	लक्षण	स्थान	माता	पिता	जन्म नगरी
1	सीमंधर	वृषभ	सुदर्शन मेरु सीता नदी की उत्तर दिशा	सत्यवती	श्रेयांस	पुंडरीकिणी
2	युगमंधर	हाथी	सु० मेरु सीता नदी की दक्षिण दिशा	सुतारा	दृढ़राज	विजयवती
3	बाहु	मृग	सु० सीतोदा की दक्षिण	विजया	सुग्रीव	सुसीमां
4	सुबाहु	कपि	सु० सीतोदा की उत्तर	सुनंदा	निशाढिल -टिल	अयोध्या
5	संजातक	सूर्य	विजय मेरु सीता नदी की उत्तर	देवसेना	देवसेन	अलकापुरी
6	स्वयंप्रभ	चन्द्र	'' '' दक्षिण	सुमंगला	मित्रभूत	विजयानगर
7	ऋषभानन	सिंह	'' सीतोदा के दक्षिण	वीरसेना	कीर्तिराज	सुसीमा
8	अनंतवीय	हाथी	'' '' उत्तर	मंगला	मेघराज	अजोध्या
9	सूरप्रभ	सूर्य	अचलमेरु सीता नदी के उत्तर	भद्रा	नागराज	विजयपुरी
10	विशालकी	चन्द्र	अचलमेरु सीता नदी दक्षिण	विजया	विजयपति	पुंडरीकिणी
11	वज्रधर	शंख	'' '' ''	सरस्वती	पद्मार्थ	सुसीमा
12	चन्द्रानन	वृषभ	'' '' उत्तर	पद्मावती	वाल्मीकी	पुंडरीकिणी
13	चन्द्रबाहु	कमल	मंदर मेरु सीता नदी के उत्तर	सुरेणुका	देवनंदी	विनीता, अयोध्या
14	भुजंगप्रभ	चन्द्र	'' '' दक्षिण	महिमा	महावल	विजयानगर
15	ईश्वर	सूर्य	'' '' ''	ज्वाला	गलसेन	सुसीमा
16	नेमिप्रभ	वृषभ	'' '' उत्तर	सेना	वीरसेन	अयोध्या
17	वीरसेन	ऐरावत	विद्युतमाली मेरु सीता नदी के ऊपर	सूर्या	पृथ्वीपाल	पुंडरीकिणी
18	महाभद्र	चन्द्र	'' '' दक्षिण	उमादेवी	देवराज	विजयानगर
19	देवयश:	स्वस्तिक	'' ''	गंगादेवी	श्रवभूत	सुसीमा
20	अजितवीर्य	कमल	'' '' उत्तर	कनका	सुबोध	अयोध्या

साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष -22, अंक-1

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

ज्ञाता की अवस्था

आगे 29 वें कलश का 32 वाँ पद्य कहते हैं उसमें मक्खन परोसते हैं।

भेदविज्ञान की प्राप्ति में धोबी के वस्त्र का दृष्टान्त

जैसै कोऊ जन गयौ धोबीकै सदन तिन,
पहिर्‌यौ परायौ वस्त्र मेरौ मानि रह्यौ है।
धनी देखि कह्यौ भैया यह तौ हमारौ वस्त्र,
चीन्हैं पहिचानत ही त्यागभाव लह्यौ है।।
तैसैंही अनादि पुदगलसौं संजोगी जीव,
संगके ममत्वसौं विभाव तामैं बह्यौ है।
भेदज्ञान भयौ जब आपौ पर जान्यौ तब,
न्यारौ परभावसौं स्वभाव निज गह्यौ है।।32।।

अर्थः- जैसे कोई मनुष्य धोबी के घर जावे और दूसरे का कपड़ा पहिनकर अपना मानने लगे, परन्तु उस वस्त्र का मालिक देखकर, कहे कि यह तो मेरा कपड़ा है, तो वह मनुष्य अपने वस्त्र का चिह्न देखकर त्यागबुद्धि करता है; उसीप्रकार यह कर्मसंयोगी जीव परिग्रह के ममत्व से विभाव में रहता है, अर्थात् शरीर आदि को अपना मानता है परन्तु भेदविज्ञान होने पर जब निज-पर का विवेक हो जाता है तो रागादि भावों से भित्र अपने निज स्वभाव को ग्रहण करता है।।32।।

काव्य - 32 पर प्रवचन

देखो, जीव कर्मों के कारण विभाव में नहीं आया है; परन्तु परसंग की ममता अथवा कर्म की ममता के कारण जीव विभाव में आया है ऐसा कहा है। अब उसको भेदज्ञान कराने के लिए यहाँ धोबी का दृष्टान्त देकर समझाया है।

जीव किसको कहना ? कि जो शरीर, कर्म और राग के विकल्प से रहित और अनन्त ज्ञानादि गुणों से पूर्ण है वह जीव है। व्यवहार से जीव को 563 भेदवाला कहा जाता है, वह जीव का वास्तविक स्वरूप नहीं है। जीव तो ज्ञान से

पूरा, आनन्द से पूरा, स्वच्छता से पूरा इसप्रकार अनन्त गुणों से पूरा शक्तियों का महासागर है। अनन्त शक्तियों का एकरूप सत्व वह जीव है। उसकी दृष्टि होने पर ही इसे ऐसा जीव ज्ञात होता है और तभी उसने जीव को माना कहा जाता है।

जैसे, कोई पुरुष धोबी के घर से वस्त्र लाकर, उसे पहिनकर सो रहा है। वहाँ दूसरा व्यक्ति आया और उसने कहा कि भाई! यह वस्त्र भूल से तेरे पास आया है, परन्तु यह वस्त्र तो मेरा है। तब वह (सोया हुआ) मनुष्य वस्त्र को उसके लक्षण द्वारा पहिचानकर, जानता है कि यह वस्त्र मेरा नहीं है। वहीं उसकी दृष्टि में से, वस्त्र का त्याग हो जाता है। अभी वस्त्र पहिने हुए है, तो भी दृष्टि में से त्याग हो गया। उसीप्रकार, आत्मा भूलवश संयोग और राग में एकता मानकर बैठा था, सो वह किसप्रकार लक्षण द्वारा जानकर भिन्न पड़ जाता है यह बात अब कहेंगे।

यहाँ नाटक समयसार का जीवद्वार अधिकार चल रहा है। जीव कैसा है कि जिसको मानने से और अनुभव करने से समकितरूपी प्रथम धर्म की शुरुआत होती है उसकी यहाँ व्याख्या की है। यहाँ धोबी के दृष्टान्त द्वारा भेदविज्ञान की प्राप्ति कैसे हो- यह बताया गया है।

जैसे, कोई मनुष्य धोबी के घर जाकर अन्य का वस्त्र अपना समझकर उसे लाकर, ओढ़कर सो गया; परन्तु उस वस्त्र का मालिक आकर कहता है कि यह वस्त्र तो मेरा है, वह मनुष्य अपने वस्त्र का चिह्न देखकर त्याग बुद्धि करता है। अभी वस्त्र को स्वयं ने ओड़ रखा है; परन्तु दृष्टि में त्याग बुद्धि हो गई है कि यह वस्त्र मेरा नहीं है। उसीप्रकार, यह ज्ञान और आनन्द स्वभावी आत्मा कर्म के संयोग से जो पुण्य-पाप के विकल्प होते हैं और बाहर में स्त्री, पुत्र, मित्रादिक का संयोग होता है। उसे अपना मान बैठा; परन्तु जब भेदविज्ञान होने पर स्व-पर का विवेक हो जाता है, तब रागादि भावों से भिन्न अपने निज स्वभाव का ग्रहण करता है।

भगवान परमेश्वर तीर्थंकर परमदेव कहते हैं कि भाई! तुझे तेरे लक्षण का पता नहीं है। तू तो ज्ञान और आनन्द के लक्षण से लक्षित तत्त्व है। शरीर, वाणी, मन, स्त्री, पुत्र, परिवार आदि सब तो पर तत्त्व हैं। वह तो कर्म के संयोग से अन्तर और बाह्य में आयी हुई उपाधि है। एक तो अघातिकर्म हैं उसके निमित्त से बाहर में शरीर, स्त्री, पुत्रादि के संयोग की उपाधि मिली है और दूसरे जो घाति कर्म हैं,

उनके निमित्त से पुण्य-पाप और ज्ञान-दर्शनादि की हीन-अवस्था हुई है, वह अन्दर की उपाधि है। ये जीव का वास्तविक स्वरूप नहीं है। यह तो विभाव है। जीव ने इसे अपना मान लिया है। जैसे, पहले मनुष्य ने दूसरे के वस्त्र को अपना मानकर ओड़ लिया था, उसीप्रकार, जीव ने विभाव को स्वभाव मान लिया है। उससे गुरु कहते हैं कि भाई ! तुझे अपने स्वरूप का पता नहीं है। तू तो ज्ञानस्वरूपी आत्मा है। ये जो कर्म के संयोग से अन्तर में पुण्य-पाप के परिणाम होते हैं वह तू नहीं है। वह तो उपाधि है और बाह्य में शरीरादि का संयोग है, वह तू नहीं है। शरीर शरीररूप होकर रहा है, वह कोई तुझरूप नहीं हुआ है। तुझे धनादिक लक्ष्मी बहुत प्रिय लगती है; परन्तु वह तो जड़रूप होकर रही है। वह कोई तुझरूप नहीं है और न तू उस रूप होकर रहा है। ऐसा होने पर भी तूने इन विभावों और संयोगों को निज मानकर अनन्त अवतार किये हैं।

तूने चौरासी लाख योनियों में अनन्त अवतार धारण किये हैं और दु:खी हुआ है। यह सब भगवान के ज्ञान में ज्ञात होता है। भगवान की वाणी में तेरे हित की बात आती है। तू शरीरादि संयोग और पुण्य-पापरूप संयोगीभाव को तेरे अपने मानता है; परन्तु वे तेरे नहीं हैं। उनसे भेद विज्ञान होने पर तुझे मालूम पड़ेगा कि अहो ! मैं तो चिद्घन हूँ, मेरा स्वरूप मेरे से अलग नहीं हो सकता। शरीर, वाणी, मन और पुण्य-पाप तो जगत की वस्तुऐं हैं। मैंने उन्हें अपना माना था, यही मिथ्यात्व और अनन्त संसार का मूल था ऐसा तुझे ज्ञात होगा।

भगवान की वाणी में ऐसा आया कि तेरा स्वरूप तो शुद्ध ज्ञानघन है। अन्तर में देख, तो तेरा स्वरूप पुण्य-पाप के राग से रहित है। जो तेरा नहीं है, उसे तूने अपना माना है और तेरे अपने असलीस्वरूप को भूल गया है- इसी से भवभ्रमण हुआ है। शरीर तो जड़ है और जड़ होकर ही रहा है और प्रत्यक्ष दिखता है कि शरीर तो जलकर राख हो जाता है। जीव तो चला जाता है; परन्तु शरीर निरोगी होते और पाँच-पचास करोड़ रुपये संयोग में हों तो इसको ऐसा लगता है कि 'मैं कुछ हूँ'; परन्तु भाई ! यह तो जड़ है। ये कहाँ अरूपी चेतन हुए हैं ? शरीर और धनादि तेरे जैसे, अरूपी और चेतन हो जाएँ तो तेरे कहलायें; परन्तु ऐसा तो होता नहीं है।

श्रोता:- हमारी तिजोरी में आये, इसलिए हमारे ही कहलाते हैं न ?

पूज्य गुरुदेवश्री:- अरे ! यह तिजोरी भी कहाँ तेरी है ? तेरी तिजोरी तो यह है

कि जिसमें अनन्त ज्ञान, अनन्त आनन्द, अनन्त स्वच्छता आदि अनन्त-अनन्त गुणों का वैभव भरा है। निज स्वरूप ही तेरा निज निधान है।

शरीर, वाणी, मन आदि तो जड़ है, जड़ होकर रहे हैं और जड़रूप ही रहनेवाले हैं। ये तो जीव के हैं नहीं; परन्तु कर्म-संयोग के लक्ष्य से हो रहे वे दोनों भाव (पुण्य-पापभाव) भी उपाधि है, मेल है; तेरा निजभाव नहीं है। दया पालूँ, व्रत पालूँ, भक्ति करूँ तो मुझे धर्म हो जायेगा ऐसा मानने से कोई शुभभाव से धर्म नहीं हो जाता; परन्तु अरे रे! 'सच्चा पानी इसको नहीं मिलता रे लाल..' वन में हिरण चमकीली रेत को सच्चा पानी की कल्पना करके पीने जाता है, परन्तु उसको सच्चा पानी नहीं मिलता है; उसीप्रकार अज्ञानी प्राणी, मेरे पास पैसा हो तो दान हो और दान हो तो लाभ (धर्म) हो- ऐसा मानकर धर्म की आशा में दौड़ता जाता है; परन्तु उसमें से उसको धर्म अथवा सुख नहीं मिलता है।

यहाँ तो कहते हैं कि असंख्यप्रदेशी तेरा क्षेत्र और अनन्तज्ञान-दर्शनादि तेरे भाव को पहिचानकर उसकी प्रतीति और अनुभव नहीं करे वहाँ तक चौरासी के अवतार में तेरा परिभ्रमण नहीं मिटेगा। जो ज्ञानानन्द स्वभाव की दृष्टि करके विकार को दृष्टि में से छोड़ देता है वह धर्मी है, वह सुखी है, वह लक्ष्मीवान है, उसके चौरासी के अवतार का अन्त आता है। अन्यथा तो सब दु:खी-दु:खी और हैरान हैं, भले ही वे करोड़पति हैं; तो भी भिखारी हैं, दु:खी हैं, विचारे हैं। अरे! करोड़ ऐसे जड़ के पति हैं; अत: जड़ हैं।

शुभ और अशुभ राग भी कषाय है, अग्नि है; तेरा स्वरूप नहीं है। भले ही दया, दान, व्रत, भक्ति का मंद राग हो; परन्तु है तो कषाय न..। इसलिए स्वयं कषाय की अग्नि में जल रहा है और उसे निज मान रहा है। पागलपन का माप नहीं है।

पुण्य-पाप के भाव, उनके फलरूप कर्मबंधन और उसके फलरूप प्राप्त संयोग यह कोई मेरी वस्तु नहीं है। मेरा और इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरा स्वभाव तो राग, कर्म और संयोग से निराला है। इसप्रकार जो अन्तर में स्वभाव को ग्रहण करता है और रागादि को दृष्टि में से छोड़ता है; उसको धर्मी कहते हैं, ज्ञानी कहते हैं अथवा शुद्ध चैतन्य लक्ष्मी का स्वामी कहते हैं।

भगवान सर्वज्ञदेव सौ इन्द्रों की सभा में ऐसा फरमाते थे, वही मुनि और संत यहाँ फरमाते हैं।

निजात्मा का सत्य स्वरूप

कहै विचच्छन पुरुष सदा मैं एक हौं।
अपने रससौं भर्यो आपनी टेक हौं।।
मोहकर्म मम नांहि नांहि भ्रमकूप है।
सुद्ध चेतना सिंधु हमारौ रूप है।।33।।

अर्थ:- ज्ञानी पुरुष ऐसा विचार करता है कि मैं सदैव अकेला हूँ, अपने ज्ञान-दर्शन रस से भरपूर अपने ही आश्रय हूँ। भ्रमजाल का कूप मोह-कर्म मेरा स्वरूप नहीं है! नहीं है!! मेरा स्वरूप तो शुद्ध चैतन्यसिंधु है।।33।।

काव्य - 33 पर प्रवचन

सुखी तो उसको कहते हैं कि जिसने दु:ख के पंथ को विस्मृत किया है। पुण्य-पाप के विकल्पों का पंथ तो दु:ख का पंथ है। बाहर में तो संयोग हैं, वे कोई प्रतिकूल नहीं हैं। अन्तर में शुभाशुभभाव होता है वही प्रतिकूल और दु:खरूप है। जिसने उसको दृष्टि में से भुला दिया है और स्वभाव का ग्रहण किया है ऐसे ज्ञानी पुरुष यह विचार करते हैं कि मैं सदैव अकेला हूँ। अपने ज्ञान-दर्शनरस से भरपूर अपने ही आधार से हूँ। भवजाल का कुआँ ऐसा मोह मेरा स्वरूप नहीं है। मेरा स्वरूप तो शुद्ध चैतन्यसिन्धु है।

मैं तो राग से लेकर सम्पूर्ण दुनिया का जानने-देखनेवाला हूँ। उसमें से कोई वस्तु मेरी है ऐसा माननेवाला मैं नहीं। मेरे में ज्ञान-दर्शन और आनन्द का रस भरा है, वह मेरा सहारा है आश्रय है, राग और पुण्य वह मेरा सहारा अथवा आश्रय नहीं है।

भगवान ऋषभदेव के पुत्र भरत चक्रवर्ती के 96 करोड़ सैनिक और 96 हजार रानियाँ थी; परन्तु वे स्वयं ज्ञानी थे, इसलिए जानते थे कि ये कोई मेरे नहीं हैं और मैं इनका नहीं हूँ। मैं हूँ वहाँ ये नहीं और इनमें मैं नहीं- ऐसे ज्ञान को भेदज्ञान कहते हैं और ऐसे ज्ञानी को धर्मी कहते हैं। अन्य जो राग की क्रिया करके धर्म होना मानते हैं, वे तो मूढ़ मिथ्यादृष्टि अज्ञानी हैं।

जिसका स्वभाव ज्ञान, दर्शन और आनन्द है उसमें अपूर्णता और विपरीतता कैसे हो ?जो स्वभाव से परिपूर्ण निजस्वरूप को मानता है उसी ने जीव को माना और अनुभव प्राप्त किया कहलाता है। (भाई !) सम्यग्दर्शन का विषयभूत तत्त्व अपूर्ण नहीं होता।

अशुभराग से तो धर्म नहीं होता; परन्तु शुभराग से भी धर्म नहीं होता। शुभराग से धर्म मानना तो भ्रमकूप है। कोई बहुत पाप करता हो, उससे बचकर कुछ दया, दान का शुभभाव करे; वहाँ दुनियाँ उसमें धर्म मानने-मनाने लगती है; परन्तु शुभराग में धर्म मानना तो महाभ्रम है। भाई! तेरा भगवान तो आनन्द का कुआँ है। तुझको तो तेरा आश्रय है। तुझे परचीज का आश्रय नहीं हो सकता।

'भ्रमजाल रूप कूप मोहकर्म मेरा स्वरूप नहीं है' -इसमें क्या कहना है? कि ज्ञानानन्द स्वरूप की दृष्टि होने पर धर्मात्मा को शुभराग की एकता भ्रम के कूप समान लगती है। शुभभाव मेरा है, इसमे मुझे लाभ होगा ऐसी शुभभाव में एकत्व बुद्धि है वह तो भ्रमजाल का कुआँ है, तो अशुभ राग की तो बात ही क्या? जो धनादि प्राप्ति की आशा से अन्य को पूजता है, वह तो महाभ्रम में पड़ा है; परन्तु प्रशस्तराग में धर्म मानता है, वह भी भ्रमकूप में पड़ा है ऐसा यहाँ कहा है। हमारा लक्ष्य तो भगवान में है, भक्ति में कहाँ कषाय है? ऐसा कहकर जो अकेले शुभराग में जुड़ गया है, वह अपने को चूक गया है, भ्रम के कुएँ में पड़ा है।

जिन्दगी बीती जा रही है भाई! आयुष्य पूर्ण होने पर यह शरीर तेरे रखने से नहीं रहेगा। किससमय देह छूटेगी यह सब निश्चित ही है। तू प्रत्येक समय मृत्यु के समीप जा रहा है, उसके पूर्व ही अपने स्वरूप को संभाल ले भाई! जो अपने स्वरूप के समीप जाता है, उसको राग का समीपपना भी नहीं रहता -राग भी उसे अपना भासित नहीं होता, तो शरीर तो अपना कैसे भासित हो?

एक तरफ मोह से उत्पन्न हुए शुभाशुभ विकारी परिणाम हैं और एक तरफ ज्ञानानन्द का निधान है; अब तुझे जहाँ जाना हो, वहाँ जा! राग से धर्म मानेगा तो वह भ्रमकूप है उसमें डूबकर मर जायेगा और आत्मा, जो कि ज्ञान और आनन्द का कंद है, उसमें एकत्व करेगा तो अमर हो जायेगा; क्योंकि वही तेरा निजस्वरूप है।

'सुद्ध चेतना सिन्धु हमारो रूप है' -अर्थात् मैं तो चैतन्य समुद्र हूँ। मेरे चैतन्य समुद्र में रागादि विकल्प नहीं हैं। भजन में भाई ने लिखा है न...

ज्यों लाख पीपल की घातक बने रे लाल,
त्यों आस्रव इस जीव के जणाय,
जुदे-जुदा अनादि से जाणजो रे लाल..।

'खो' अर्थात् लाख। जैसे पीपल के वृक्ष में लाख हो, वह लाख पीपल का घात

करती हैं; उसीप्रकार शुभाशुभ आस्रव जीव का घात करते हैं जीव को नये आस्रव का कारण हैं, धर्म के कारण नहीं। जैसे मृगी का वेग आता है जाता है; उसीप्रकार आस्रव आते हैं और जाते हैं; परन्तु वे जीव से भिन्न ही हैं। यह बात समयसार की 74 वीं गाथा में आती है, उसका प्रवचन यहाँ सुनकर (उन भाई ने) यह भजन बनाया है।

मानव भव जग में दुर्लभ रे लाल,
दुर्लभ दुर्लभ जैन अवतार,
इसके साथ ही सद्गुरुछाया दुर्लभ रे लाल...।

सत्य बात सुनने को मिलना भी महादुर्लभ है। करोड़ों-अरबों रुपये और राज्यादि प्राप्त होना सहज है, परन्तु सच्ची बात कान में पड़ना भी बहुत दुर्लभ है।

सरोवर किनारे हिरण प्यासे रे लाल...
दोड़े-हाँफे चमकीले जल के काज-
इसे सच्चा जल जग में ना मिले रे लाल

क्रमशः

मङ्गलायतन के सम्बन्ध में जानकारी

फार्म नं० 4, नियम नं० 8

पत्रिका का नाम	: *मङ्गलायतन* (हिन्दी)
प्रकाशन अवधि	: मासिक
प्रकाशक का नाम	: स्वप्निल जैन (भारतीय)
पता	: 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश)
सम्पादक का नाम	: डॉ. सचिन्द्रकुमार जैन (भारतीय)
पता	: उपरोक्त
मुद्रक का नाम	: स्वप्निल जैन (भारतीय)
पता	: उपरोक्त
मुद्रण का स्थान	: *मङ्गलायतन* मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़- 202001
स्वामित्व	: स्वप्निल जैन, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़ (उ.प्र.)

मैं स्वप्निल जैन एतद् द्वारा घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपुर्यक्त विवरण सत्य हैं।

स्वप्निल जैन

दिनाङ्क : 01.04.2022 प्रकाशक

जैन खगोल और विज्ञान का समन्वय

आधुनिक विज्ञानवादी, विद्वान यह तो मानता है कि हमने विश्व के विज्ञान में जो उपलब्ध सामग्री की जानकारी प्राप्त की है, वह तो महा सागर के सामने छोटी सीप के टुकड़े ही हैं और हमारी खोज भी परिवर्तनशील है। यूरोपीय विद्वानों और उन्हीं के विधान भारत के प्राचीन खगोल-भूगोल के कथन को उचित मानने में प्रामाणिक आधार देते थे। पृथ्वी फिरती है, सूर्य स्थिर है, ऐसा कथन अर्वाचीन मत का है। पृथ्वी स्थिर है, सूर्य-चंद्रादि फिरते हैं, प्राचीन ग्रंथ तथा जैन सिद्धांत कहते आये हैं।

विश्व अर्थात् छह जाति के समस्त द्रव्यों का समूह —

(1) जीव (आत्मा) अनंतानंत संख्या में हैं।

(2) पुद्गल जीव की संख्या से अनंतानंत गुने हैं।

(3) धर्मास्तिकाय लोकाकाश जितना बड़ा अमूर्तिक एक ही द्रव्य है।

(4) अधर्मास्तिकाय लोकाकाश जितना बड़ा अमूर्तिक एक ही द्रव्य है।

(5) आकाश-जो सर्वत्र क्षेत्र से चौड़ाईरूप अनंत.. अनंत.. अनंत.. अवकाशरूप अमूर्तिक एक ही द्रव्य है, उसके दो विभाग हैं, जिसमें जीवादिक देखे जाते हैं - उस संग्रहात्मक जगत को लोकाकाश कहते हैं, शेष अमर्यादित अनंत-निश्चय अनंत क्षेत्र है, उसे अलोकाकाश कहते हैं (जिसके सामने लोक अणुमात्र है)।

(6) कालाणु, द्रव्य असंख्य है, अमूर्त है। वह सब भी अपनी-अपनी सत्तारूप सदा उत्पाद, व्यय, ध्रुवता सहित ही है। स्वतंत्र अस्तित्वमय पदार्थ है। उसका कोई कर्ता-हर्ता-धर्ता नहीं है। भरतक्षेत्र और ऐरावतक्षेत्र में कर्मभूमि में जहाँ आर्यक्षेत्र है, वहाँ बाह्यरचना में हानि वृद्धि, क्षेत्र, कालानुसार होती रहती है।

जैनदृष्टि से विश्व अनादि-अनंत 14 राजु (असंख्य योजन के एक राजु) प्रमाण है, यह क्षेत्र कभी घटते-बढ़ते नहीं। उनकी आकृति दो पैर चौड़ा करके, और दो हाथ कटि स्थान पर रखकर, पूर्व दिशा में खड़ा हुआ पुरुष के समान है। इस 14 राजु लोक में नीचे सात राजु क्षेत्र को अधोलोक, मध्य को तिर्यंच लोक और उस सात राजु के ऊपर के भाग को ऊर्ध्वलोक कहा है। यह तिरछे लोक में ठीक मध्यभाग में एक लाख महायोजन का थालीवत् गोलाकार जम्बूद्वीप है,

जम्बूद्वीप के मध्य भाग में एक लाख महायोजन उत्तंग सुमेरु नामक पर्वत है। उस मेरुपर्वत से दक्षिण दिशा में 49474 महा योजन दूर यह भरतक्षेत्र है, यह दृश्यमान भरतक्षेत्र तो बहुत-बहुत छोटा ही है। भरतक्षेत्र के मध्यभाग में वैताढ्य पर्वत है, वहाँ ऊपर महान वैभववंत मनुष्य निवास करते हैं, विमान द्वारा आकाश में गमन करते हैं हजारे बड़े-बड़े नगर हैं। वह पर्वत हजारों मील ऊँचा तथा पूर्व पश्चिम दिशा में 14471 महायोजन करीब लम्बा है, इस वैताढ्य पर्वत से दक्षिण दिशा के मध्यबिन्दु से करीब एक लाख 85 हजार कोस दूर सर्वत्र समुद्रों से वेष्टित द्वीप के समान वर्तमान विश्व है जो आधुनिक विज्ञानी द्वारा जगत माना जाता है है, और उस विश्व की इस पृथ्वी का आकार अर्धवृत्त घुम्मट-आधा लड्डू के समान है, जम्बुद्वीप के चारों ओर चूड़ी आकार दूनी-दूनी परिधि से घेरे हुए असंख्य समुद्र और असंख्य महाद्वीप हैं, उसमें सबके बीच में यह जंबुद्वीप का प्रमाण १ लाख महायोजन है। यह नाप-शास्त्रीय माप द्वारा है - 1 योजन के 4500 मील होते हैं। उसमें भरतक्षेत्र का माप उत्तर दक्षिण 526 $\frac{6}{19}$ योजन है-पूर्व पश्चिम 14471 योजन है।

दक्षिण भारत के उत्तर सीमांत में वैताढ्य पर्वत है, वैताढ्य पर्वत से दक्षिण बाजु 114, $\frac{11}{19}$ दूर मध्य बिन्दु है। मध्य बिन्दु पर अयोध्यानगरी है, यह नगरी आज की अयोध्या नहीं किंतु भगवान आदिनाथ-ऋषभदेव ने जब स्वर्गलोक से यहाँ कुलकर मनु, नाभिराजा के यहाँ जन्म लिया था, वह अयोध्या है। इस अयोध्या को केन्द्र मानकर खगोल-भूगोल के गणित होते हैं। आज स्टेंडर्ड टाम और लोकल टाइम में जिसप्रकार अंतर है, उसीप्रकार अयोध्यानगरी के अनुलक्षित जिस पृथ्वी पर रह रहे हैं, वहाँ से वह अयोध्यानगरी एक लाख पच्चासी (185000) कोस दूर है, पोने तीन मील का एक कोस मानना।

हिन्दुस्तान टाइम्स के अक्टूबर के अंक में एक रशियन वैज्ञानिक ने लिखा है कि हम जिस पृथ्वी पर रह रहे हैं और जानते हैं, उनसे एक कोटि गुनी अधिक जनसंख्या है। ई. सन. 1965 यूनाइटेड इन्फर्मेशन में भी कितने ही वैज्ञानिकों को सूचित किया था कि हमारे इस ब्रह्मांड जैसा दूसरा ब्रह्मांड का अस्तित्व भी है-जिसमें अरबों लोग निवास करते हैं। अमेरिका के समक्ष सलामती के लिये ऐराड्राम की जगह की पसंदगी करने के लिये रशिया के वैज्ञानिकों ने सर्वे करते उत्तर ध्रुव के प्रदेश में रडार द्वारा देखने

पर 25000 (पच्चीस हजार) चौरासी लाख का प्रदेश देखा जहाँ जाने के लिये प्रयत्न भी किया किंतु निष्फल हुआ। दक्षिण ध्रुव में आगे जाने का प्रयत्न भी कई वर्ष पूर्व हो चुका जो निष्फल हुआ।

रूस में एक वैज्ञानिक ने अपनी मृत्यु वसीयत में लिखा था कि मेरा शव दूर-दूर उत्तर ध्रुव में गाडना, पश्चात् सबमेरीन के द्वारा दूर-दूर जाकर ऊपर आने पर देखा तो उत्तर दिशा में समुद्र के आगे असीम बड़ा-बड़ा जंगल है, शव तो बर्फीले समुद्र में गाड़कर चले आये। अत: उत्तर ध्रुव की सीमा लाखों मील है, पृथ्वी वर्तमान दृश्यमान जगत के अर्थ में आधे लड्डू के समान है जिसमें खड्डे भी हैं, उन्नत प्रदेश भी हैं और जम्बुद्वीप का आकार स्थलीरूप में है।

आधे लड्डू के समान तो भरतक्षेत्र का आर्यखण्ड ही है, पश्चात् लाखों मील पृथ्वी फैली हुई है। उसमें क्रमश: बहुत लम्बे-चौड़े पर्वत भी हैं।

विश्व में मध्यलोक, उसमें जम्बूद्वीप, उसमें ठीक मध्यभाग में मेरुपर्वत है, जो नीचे दस हजार महायोजन चौड़ा है, भूतल में एक हजार योजन-और ऊँचाई में 99 हजार योजन है। वहाँ तक मध्यलोक है, मेरुपर्वत से चारों ओर दस हजार योजन छोड़कर ज्योतिषी मंडल उनकी प्रदक्षिणारूप गमन कर रहे हैं, नीचे पृथ्वी के समतल से 790 योजन ऊँचे स्थान पर ताराओं के मंडल आते हैं। वहाँ से 10 योजन ऊपर सूर्य, सूर्य से 80 योजन ऊपर चंद्र, पश्चात् 4 योजन ऊपर बुध, 3 योजन पर शुक्र, 3 योजन पर गुरु, 3 योजन पर मंगल और उनसे 3 योजन पर शनि आता है। सूर्य और चंद्र जम्बूद्वीप में दो-दो हैं, इन सूर्य और चंद्र का परिभ्रमण दिवस और रात्रि, शीत-उष्णता-दिनमान का घटने-बढ़ने में कारण है। सूर्य और चंद्र विमान के नीचे नित्य राहु और पर्व राहु नामक दो-दो विमान साथ-साथ घूमते रहते हैं, उनसे चंद्रमा की कला में हीनता अधिकता देखी जाती है, पर्व राहु द्वारा सूर्य या चंद्र में ग्रहण का दृश्य बनता है।

खगोल भूगोल के विषय में विशेष जानना हो तो करीब दो हजार वर्ष के प्राचीन जैन महर्षि द्वारा लिखित-तियोयपण्णत्ति भाग 1, 2, लोक विभाग, त्रिलोकसागर, तत्त्वार्थसूत्र की टीका सर्वार्थसिद्धि, तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक नामक वृहद् टीका, कर्ता श्री विद्यानंदस्वामी, यहाँ से देखकर अभ्यास करें। पृथ्वी गोलगेंद समान नहीं है, घूमती नहीं है, उसके बारे में आधार सहित लिखना है, अवकाश मिलते ही लिखेंगे। *साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष -22, अंक-11*

गतांक से आगे

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

द्वादशांग श्रुत का परिमाण एवं विषय का विस्तार निम्नानुसार है:—

1. आचारांग में 18000 पदों द्वारा मुनियों के आचार का वर्णन है। अर्थात् मुनि को कैसे चलना चाहिए, कैसे खड़ा होना चाहिए, कैसे बैठना चाहिए, कैसे सोना चाहिए, कैसे भोजन करना चाहिए और कैसे वार्तालाप करना चाहिए? इत्यादि विषयों का कथन किया गया है।

2. सूत्रकृतांग में 36000 पदों द्वारा ज्ञानविनय, प्रज्ञापना, कल्प्य-अकल्प्य छेदोपस्थापना आदि व्यवहारधर्म की क्रियाओं का वर्णन है तथा इस अंग के स्वसिद्धांत और परसिद्धांत कथन भी समाविष्ट है।

3. स्थानांग में 42000 पद हैं। इसमें एक से लेकर उत्तरोत्तर एक-एक अधिक स्थानों का निरूपण किया गया है।

4. समवायांग में 1,64,000 पद हैं। इसमें द्रव्य, क्षेत्र, काल, और भावरूप समवाय का चित्रण किया गया है। इस प्रकार समानता की अपेक्षा जीवादि पदार्थों के समवाय का वर्णन समवायांग में उपलब्ध है।

5. व्याख्याप्रज्ञप्ति अंग में 2,28,000 पद होते हैं। इसमें 60,000 प्रश्नों द्वारा जीव, अजीव आदि पदार्थों का विवेचन किया गया है।

6. ज्ञातृधर्मकथा अंग में 5,56,000 पद हैं। इसमें तीर्थंकरों की धर्मदेशना, विविध प्रश्नोत्तर एवं पुण्य पुरुषों के आख्यान वर्णित हैं।

7. उपासकाध्ययनांग में 11,70,000 पद हैं। इसमें श्रावकाचार का निरूपण किया जाता है।

8. अन्तःकृद्दशांग अंग में 23,28,000 पद हैं। इसमें प्रत्येक तीर्थंकर के तीर्थकाल में अनेक प्रकार के दारुण उपसर्गों को सहन कर निर्वाण प्राप्त करनेवाले दस-दस अन्तःकृत केवलियों का वर्णन है।

9. अनुत्तरोपपादिकदशांग अंग में 92,44,000 पद हैं और एक-एक तीर्थंकर के तीर्थकाल में नाना प्रकार के दारुण उपसर्गों को सहन कर पाँच अनुत्तर विमानों में जन्म ग्रहण करनेवाले दस-दस मुनियों का चरित्र अंकित है।

10. प्रश्नव्याकरणांग में 93,16,000 पदों द्वारा आक्षेप-प्रत्याक्षेप पूर्वक

प्रश्नों का समाधान है। प्रकारांतर से कहें तो आक्षेपणी, विक्षेपणी, संवेदिनी और निर्वेदिनी—इन चार कथाओं का विस्तृत वर्णन है।

11. विपाकसूत्रांग में 1,84,00,000 पद हैं। इसमें पुण्य और पापरूप कर्मों का फल भोगनेवाले व्यक्तियों का चरित्र निबद्ध है।

इस प्रकार ग्यारह अंगों में कुल चार करोड़ पन्द्रह लाख दो हजार (4,15,02,000) पद हैं। *(धवला पुस्तक-1, पृष्ठ 108)*

12. दृष्टिवादांग के पाँच अधिकार हैं :—

'दृष्टिवादः पञ्चविधः - परिकर्म सूत्रं प्रथमानुयोगः पूर्वगतं चूलिका चेति।' *(सर्वार्थसिद्धि, अध्याय-1, सूत्र-20, पृष्ठ 85)*

दृष्टिवाद अंग पाँच प्रकार का है — परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत और चूलिका। इन पाँच भेदों के कुल पदों की संख्या 108,68,56,005 है। अब इन पाँचों का पृथक्-पृथक् वर्णन करते हैं।

1. परिकर्म — परिकर्म के पाँच भेद हैं—चन्द्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, द्वीपसागरप्रज्ञप्ति, व्याख्याप्रज्ञप्ति। *(धवला पुस्तक-1, पृष्ठ 110)*

1-1. चन्द्रप्रज्ञप्ति नाम का परिकर्म चन्द्रमा की आयु, परिवार, ऋद्धि, गति और बिम्ब की ऊँचाई आदि का वर्णन करता है। इसकी पद संख्या 36,05,000 है।

1-2. सूर्यप्रज्ञप्ति में सूर्य की आयु, भोग, उपभोग, परिवार, ऋद्धि, गति बिम्ब की ऊँचाई आदि का वर्णन किया गया है। इसकी पद संख्या 5,03,000 है।

1-3. जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में जम्बूद्वीपस्थ भोगभूमि और कर्मभूमि में उत्पन्न हुए नाना प्रकार के मनुष्य तथा दूसरे तिर्यंच तथा पर्वत, द्रह, नदी आदि का वर्णन किया गया है। इसकी पद संख्या 3,25,000 है।

1-4. द्वीपसागरप्रज्ञप्ति में द्वीपों और समुद्रों के प्रमाण का तथा द्वीपसागर के अन्तर्भूत नाना प्रकार के दूसरे पदार्थों का वर्णन किया गया है। इसकी पद संख्या 52,36,000 है।

1-5. व्याख्याप्रज्ञप्ति में पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल, भव्यसिद्ध और अभव्यसिद्ध जीव इन सबका वर्णन किया गया है। इसकी पद संख्या 84,36,000 है। *क्रमशः*

साभार : स्वाध्याय का स्वरूप

विद्वान परिचय शृंखला

कविवर पुष्पदंत

महापुराण, जसहर चरिउ तथा णायकुमारचरिउ अप्रभंश काव्यों के कर्ता महाकवि पुष्पदंत हैं। उनके माता-पिता मुग्धा देवी और केशवभट्ट काश्यप-गोत्रीय ब्राह्मण थे, वे पहले शैवधर्मावलम्बी थे, किंतु अपने जीवन के अंतिमचरण में उन्होंने एक जैन मुनि का उपदेश पाकर जैनधर्म धारण कर लिया था और वे जैन संन्यास विधि से मरण को प्राप्त हुए। मान्यखेट में रहते हुए उन्होंने इन तीनों ग्रंथों की रचना की।

मान्यखेट नगरी के राजा कृष्णराय थे, जिनकी वल्लभराय उपाधि थी। उनके महामंत्री थे नन्न, जो कोडिण्य गोत्रीय थे, उनके पिता का नाम भरत और माता का नाम कुन्दव्वा था। महाकवि का आश्रय दाता परिवार भरत और नन्न का ही था, जिनके आग्रह पर उन्होंने इन ग्रंथों की रचना की। वे जैनधर्म के परम भक्त थे।

स्वाभिमानी पुष्पदंत को राजाओं और धनीपुरुषों से, प्रारंभ में वितृष्णा थी किंतु भरत और नन्न के स्नेह व सम्मान से वे उनके ही हो गए। मान्यखेट आने से पूर्व वे किसी वीरराव नामक शैवधर्मावलंबी राजा के आश्रय में रहते थे और उनकी प्रशंसा में कुछ काव्य रचना भी की थी। संस्कृत में जो शिमहिम्नस्तोत्र है, उसके कर्ता का नाम भी पुष्पदंत है। कहा जाता है, जैन धर्म ग्रहण कर लेने के पश्चात् वे राष्ट्रकूट नरेशों की राजधानी में आकर रहने लगे और जैनधर्म के अनुरागी थे।

राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय अकाल वर्ष (739-967 ई.) ने 959 ई. में करहाड़ में ताम्रपत्र लिखवाए थे। वह जैन धर्म का पोषक था। जैनाचार्य वादिघंगल भट्ट का वह बड़ा सम्मान करता था—ये राजनीति विज्ञान के भी विद्वान थे। इन्द्रनंदि ने 'ज्वालामालिनी कल्प' मान्यखेट में 939 ई. में रचा था। वादिंघगल भट्ट, महाकविपोन्न, इन्द्रिनंदि, आचार्य सोमदेव महाकवि पुष्पदंत के समकालीन थे। राष्ट्रकूट नरेशों की जिन भक्ति, दानप्रियता, विद्याप्रेम अद्‌भुत था। विश्व इतिहास में इसके समानांतर कोई राजवंश नहीं है। एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात, इस वंश की यह है कि इन्होंने धर्म को लेकर कोई विध्वंस नहीं किया। वे अन्य धर्मों के प्रति उदार रहे।

प्राचीन हस्तलिखित इन ग्रंथों की जो प्रतियाँ प्राप्त करते हैं, उनमें जसहर चरिउ (सन् 1333 ई.) णायकुमार चरिउ सन (1462 ई.) के हैं, जिनके सभी संदर्भों और कवि के द्वारा राजाओं और घटनाओं का जो वर्णन किया गया है, उनके अनुसार महापुराण की रचना ई. सन. 965 ई. में हुई—उसके पश्चात् णायकुमार चरिउ और उसके पश्चात् जसहर चरिउ की रचना हुई।

महापुराण में जैनधार्मिक परंपरा में प्रख्यात 24 तीर्थंकर, 12 चक्रवर्ती, 9 बलभद्र, 9 नारायण और 9 प्रतिनारायण इन 63 शलाका पुरुषों का वर्णन है। इस ग्रंथ के प्रणयन में छह वर्ष लगे। पुष्पदंत की दूसरी रचना है जसहर चरिउ (यशोधर चरित्र)। इसमें यशोधर के 5-7 पूर्वजन्मों के वृतान्त समाविष्ट हैं और उनके माध्यम से जैन धर्म के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है कि प्रत्येक जीव के बुरे कर्म के अनुरूप फल उसे इसी जन्म में नहीं अपितु भावी जन्म जन्मांतरों में भी भोगना पड़ता है। जीव हिंसा के विरुद्ध भी इस काव्य में भावपूर्ण अभिव्यक्ति हुई है।

णायकुमार चरिउ के नायक नागकुमार हैं जो एक राजपुत्र हैं, किंतु सौतेले भ्राता श्रीधर के विद्वेष से अपने पिता द्वारा निर्वासित नाना प्रदेशों में भ्रमण करते हैं तथा अपने शौर्य, नैपुण्य व कला—चातुर्यादि द्वारा अनेक राजाओं व राजपुरुषों को प्रभावित करते हैं। बड़े-बड़े योद्धाओं को अपनी सेवा में लेते हैं तथा अनेक राजकन्याओं से विवाह करते हैं। अंततः पिता द्वारा आमंत्रित किए जाने पर पुनः राजधानी में लौटते हैं और राज्यभिषक्त होते हैं। फिर जीवन के अंतिम चरण में संसार से विरक्त होकर मुनि दीक्षा लेते हैं और मोक्ष प्राप्त करते हैं। प्रसंगों की कल्पना करने में पुष्पदंत ने पौराणिक सामग्री का उपयोग किया है और ऐतिहासिक स्मृतियों का भी समावेश किया है। पुष्पदंत ने मुनियों द्वारा ज्ञानागम का संबोधन व अन्य मतों की आलोचना करते हुए त्याग मार्ग के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति को प्रतिपादित किया है। सहज सरल शब्दों में यह विश्लेषण लोक प्रभावी है।

अपभ्रंश भाषा में कई जैन विद्वानों ने अपना साहित्य रचा है। ई.पू. द्वितीय शती में रचित पतंजलिकृत महाभाष्य से स्पष्ट है कि उक्त काल में संस्कृत से विकृत व लोक प्रचलित शब्दों को अपभ्रंश कहा जाता है। किसी भाषा को अपभ्रंश

कहनेवाले प्रथम साहित्य शास्त्री दण्डी हैं जो लगभग पाँचवीं-छठीं शती में हुए। भरत मुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में अपभ्रंश का उल्लेख 'उकार' बहुल भाषा कहकर किया है। जो भी हो, यह स्पष्ट है कि अपभ्रंश भाषा जनसाधारण की बोली रही है। मार्कण्डेय ने 27 प्रकार की अपभ्रंश बोलियों को गिनाया है। यह भिन्न-भिन्न प्रदेश में भिन्न-भिन्न रूप में प्रचलित रहे हैं। अपभ्रंश भाषा के आदि महाकवि स्वयंभू माने गए हैं। पउमचरिउ और रिट्ठनेमिचरिउ (अरिष्टनेमि) उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं ? जैन चिंतन की शाश्वत् परंपरा का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि जैनाचार्यों ने जब जो भाषा चलन में रही उस भाषा में अपना ग्रंथ लेखन किया।

भारतीय इतिहास में 10वीं, 11वीं व 12वीं शताब्दी अपना अलग महत्व रखती है। उत्तर से दक्षिण तक व पूर्व से पश्चिम तक एक राजनैतिक अस्थिरता दिखाई देती है। 10वीं शती में जब पुष्पदंत मान्यखेट में रहे होंगे तब मालव नरेश हर्षदेव ने मान्यखेट का विध्वंस किया था ? कई सामंत घरानों का उदय उस काल में हुआ, जिसने भविष्य के इतिहास को प्रभावित किया। विदेशी आक्रमणों ने भी अपना विनाशकारी प्रभाव पैदा किया। ●

मार्च माह के मुख्य तिथि-पर्व

1 मार्च - फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी
वासुपूज्य भगवान जन्म-तप कल्याणक

5 मार्च - फाल्गुन शुक्ल तृतीया
भगवान अरनाथ गर्भ कल्याणक

7 मार्च - फाल्गुन शुक्ल पंचमी
भगवान मल्लिनाथ मोक्ष कल्याणक

9 मार्च - फाल्गुन शुक्ल सप्तमी
भगवान चन्द्रप्रभु मोक्ष कल्याणक

10 मार्च - फाल्गुन शुक्ल अष्टमी
भगवान संभवनाथ गर्भ कल्याणक
अष्टाह्निका व्रत प्रारम्भ

17 मार्च - फाल्गुन शुक्ल चतुर्दशी
षोडशकारण व्रत प्रारम्भ

18 मार्च - फाल्गुन शुक्ल 15
अष्टाह्निका व्रत समाप्त (होली)

21 मार्च - चैत्र कृष्ण 3-4
भगवान पार्श्वनाथ ज्ञान कल्याणक

22 मार्च - चैत्र कृष्ण 5
भगवान चन्द्रप्रभ गर्भ कल्याणक

25 मार्च - चैत्र कृष्ण अष्टमी
भगवान शीतलनाथ गर्भ कल्याणक

26 मार्च - चैत्र कृष्ण 9
भगवान ऋषभनाथ जयंती
भगवान ऋषभनाथ जन्म-तप कल्याणक

31 मार्च - चैत्र कृष्ण चतुर्दशी

प्रेरक-प्रसंग

पुण्य की सजा भोग रहा हूँ!

कुछ शताब्दी पूर्व, दिल्ली सम्राट के प्रधानमन्त्री का नाम जिनविजय था। वे बड़े विद्वान, कुशल प्रशासक एवं तत्त्ववेत्ता थे। शासन का पूरा भार जिनविजय पर ही था; इसलिए वह राजा–प्रजा सभी को बहुत प्रिय था। वह बड़े मनोहारी आध्यात्मिक पद बनाया करता था, जिससे उसकी ख्याति सब देशों में फैली हुई थी।

एक ज्ञानधन नाम का तत्त्वज्ञानी, इनकी कविताओं से बहुत प्रभावित हुआ। ज्ञानधन इनसे मिलने दिल्ली आया। उसने अनेक लोगों से जिनविजय का पता पूछा, किन्तु किसी ने नहीं बताया। अन्त में ज्ञानधन, एक शास्त्रसभा में पहुँचा। वहाँ जिनविजय के बनाये पद बोले जा रहे थे। ज्ञानधन ने पूछा –जिनका यह पद बोला जा रहा है, क्या आप लोग उनका पता बता सकते हो? लोगों ने कहा– वे राजा जिनविजय हैं। वे दिल्ली सम्राट के प्रधानमंन्त्री हैं, किले में उनका महल है। ज्ञानधन को विश्वास नहीं हुआ कि इतना बड़ा तत्त्वज्ञानी प्रधानमन्त्री हो सकता है। वह सीधा राजा जिनविजय के पास पहुँचा। मन्त्री से चर्चा करने के बाद ज्ञानधन ने कहा– आप इतने ज्ञानी होते हुए इस राज्य के पचड़े मे कैसे फँस गये? इस दलदल से निकल मेरे साथ चलें। जिनविजय ने कहा–पुण्य की सजा भोग रहा हूँ। इतना कहकर जिनविजय उसके साथ चल दिये। ये दोनों कई दिनों के भूखे–प्यासे एक गाँव में पहुँचे। ज्ञानधन ने कहा–मैं गाँव से भोजन लाता हूँ, तब तक आप इसी वृक्ष के नीचे बैठिये। वे एक वृक्ष के नीचे सो गये।

उसी पथ से नेपाल का राजा, आवश्यक कार्यवश प्रधानमंत्री जिनविजय से मिलने आ रहा था। नेपाल नरेश भी उसी वृक्ष के नीचे ठहर गया, जहाँ मन्त्री सो रहे थे। राजा ने मन्त्री को पहचान लिया है और बड़े आदर के साथ सुन्दर बिस्तर करके सुला दिया। इतने में ज्ञानधन भोजन लेकर आ गया। वह जिनविजय को न देखकर सोचने लगा– प्रधानमन्त्री भूख से घबड़ा कर चला गया है। उसने नेपाल नरेश से पूछताछ की तो पता चला कि मन्त्री जी बिस्तर पर आराम कर रहे हैं। ज्ञानधन ने जिनविजय को जगाकर पूछा–यह सब कैसे हुआ। मन्त्री जी ने कहा– पुण्य की सजा भोग रहा हूँ। ज्ञानधन सब कुछ समझ गया।

शिक्षा–न तो पुण्य का उदय टाला जा सकता और न ही पाप का। अतः दोनों के उदय में समता भाव रखते हुए तत्त्वज्ञान का अभ्यास करना ही श्रेष्ठ कर्तव्य है।

साभार : बोध कथायें

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– किसी ने इष्ट स्थान जाने का सच्चा मार्ग जान लिया, परन्तु चलने में थोड़ी देर लगती है तो भी वह मार्ग में ही है।

उसी प्रकार– धर्मी जीव ने वीतरागता का मार्ग देखा है, रागरहित स्वभाव को जाना है, परन्तु सर्वथा राग दूर करने में थोड़ा समय लगता है तो भी वह मोक्ष के मार्ग में ही है।

जिस प्रकार– दर्पण चेहरा सुधारने का कारण है।

उसी प्रकार– अरहंत भगवान अपने परिणाम सुधारने के लिए है।

जिस प्रकार– मिश्री के बाहर मिश्री का कुछ भी नहीं है।

उसी प्रकार– आत्मा का, आत्मा के बाहर कुछ नहीं है।

जिस प्रकार– सोना, सोना ही है अन्य धातु रूप नहीं है।

उसी प्रकार– आत्मा, आत्मा ही है अन्य द्रव्य रूप नहीं है।

जिस प्रकार– बादलों को कहते है जहां पानी की जरूरत है वहां बरस जाओ वरना हवा का झोंका आयेगा कहीं भी पटक देगा।

उसी प्रकार– जीव को कहते है अपना उपकार कर ले वरना कर्मों का झोंका आयेगा सब नष्ट हो जायेगा ।

जिस प्रकार– गोले में लालिमा,बक्कल एवं छिलका अलग है गिरि अलग है।

उसी प्रकार– जीव में भावकर्म, द्रव्यकर्म, नोकर्म अलग है, आत्मा अलग है।

जिस प्रकार– लहरे पानी के उपर होती है, पानी के अन्दर नहीं।

उसी प्रकार– परिणमन पर्याय में होता रहता है, द्रव्य में नहीं।

जिस प्रकार– वृक्ष का मूल पकड़ने से पूरा वृक्ष, हाथ में आ जाता है।

उसी प्रकार– जो ज्ञायक भाव को पकड़ता है उसे पूरा आत्म पकड़ में आ जाता है। शुभ परिणाम करने से कुछ हाथ नहीं आयेगा।

जिस प्रकार– पंतग आकाश में उड़ती हो लेकिन डोर हाथ में हो तो पतंग हाथ में ही है।

उसी प्रकार– उपयोग कही भी जाने पर भी अगर शुद्धोपयोग रूपी डोरी हाथ में हो तो कोई डर नहीं।

क्रमशः संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की

समाचार-दर्शन

तीर्थधाम मङ्गलायतन में विशेष पूजन सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : ऋषभदेव ज्ञानकल्याणक, श्रेयांसनाथ भगवान का जन्म-तपकल्याणक, श्री मुनिसुव्रतनाथ का निर्वाण कल्याणक के मंगल पावन अवसर पर महावीर मन्दिर में प्रक्षाल-पूजन, पूज्य गुरुदेवश्री के द्वारा इष्टोपदेश ग्रन्थ पर प्रवचन, डॉ. सचिन्द्र शास्त्री द्वारा स्वाध्याय, दोपहर में धवला वाचना-बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन। सायंकालीन जिनेन्द्र भक्ति मंगलार्थी छात्रों वरांग जैन, अर्चित जैन, संयम जैन, विधान जैन, अन्वेश जैन, अनिकेत जैन, आदित्य जैन, पार्थ जैन, आश्रय जैन, सम्यक् जैन शिकोहाबाद, बाल मंगलार्थी दिव्य, अमय और ध्वनि द्वारा सम्पन्न हुई। मूलाचारजी वाचना, समयसार कलश उच्चारण सहित सानन्द सम्पन्न हुआ। इस आयोजन में श्री अनिल जैन बुलन्दशहर, श्री आकाश जैन अलीगढ़, श्री ध्रुव जैन, श्री अशोक जैन, तथा सम्पूर्ण मंगलायतन परिवार उपस्थित था।

पंचतीर्थ जिनालय का दसवाँ वार्षिकोत्सव सानन्द सम्पन्न

जयपुर : दिनांक 25 से 27 फरवरी 2022 तक पण्डित टोडरमल स्मारक के तत्त्वावधान में त्रि-दिवसीय वार्षिकोत्सव आयोजन अनेक आयोजनों सहित सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान डॉ. हुकमचंद भारिल्ल के लाइव प्रवचन। श्री प्रवचनसार मण्डल विधान एवं युवा विद्वान डॉ. संजीवकुमार गोधा द्वारा विधान का विशेष स्पष्टीकरण। 2012 में संपन्न भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की मधुर स्मृतियों का वीडियो क्लिप के माध्यम से पुनरावलोकन। श्री शुद्धात्मप्रकाश जी भारिल्ल द्वारा 'सामान्य से विशिष्ट तक' कार्यक्रम में महाविद्यालय के स्नातकों से प्रेरणास्पद संवाद। पण्डित अभयकुमार शास्त्री व डॉ. शान्तिकुमार पाटील द्वारा प्रवचनसार विषय पर मार्मिक व्याख्यान। महाविद्यालय के स्नातकों एवं वर्तमान विद्यार्थियों द्वारा गोष्ठी के माध्यम से प्रवचनसार विषय पर गहन चर्चा। बहुचर्चित कृति 'भरत का अंतर्द्वंद्व' का संगीतमय लोकार्पण एवं प्रसिद्ध गायक गौरव सोगानी एवं दीपशिखा सोगानी द्वारा उनकी लाइव प्रस्तुति। अपार उत्साह के साथ पण्डित टोडरमल स्मारक के परिसर में श्रीजी की भव्य शोभायात्रा व पंचतीर्थ जिनालय स्थित मनोहर जिनबिम्बों का महास्तमकाभिषेक इस प्रकार अनेक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

वैराग्य समाचार

गौरझामर : श्री सुधीरकुमार जैन का आकस्मिक देहपरिवर्तन हो गया। आप देव-शास्त्र-गुरु की आराधना एवं प्रभावना के प्रचार-प्रसार में तत्पर थे। आप पण्डित रमेशजी मंगल, सोनगढ़ के साले थे।

उदयपुर : श्री कन्हैयालालजी टाया का शान्तपरिणामपूर्वक देहपरिवर्तन हो

गया। आप धर्मनिष्ठ सज्जन व्यक्ति थे तथा अनेकानेक धार्मिक व सामाजिक संस्थाओं के प्राणतत्त्व थे।

गुना : श्रीमती अंगूरीबाई बांझल शान्तपरिणामपूर्वक देहपरिवर्तन हो गया। आप सरल स्वभावी, तत्त्वप्रेमी महिला थीं और आप स्व० पण्डित बाबूलालजी बांझल की धर्मपत्नी थीं।

भोपाल : प्रो. रतनचन्द जैन का देहपरिवर्तन शान्तपरिणामोंपूर्वक हो गया है। आप बी.यू. भोपाल संस्कृत विभागाध्यक्ष थे। आप अनेक वर्षों से जिनभाषित पत्रिका के सम्पादक थे। आप सरल, सौम्य, उदार, परोपकारी व्यक्तित्व के धनी थे।

दिवंगत आत्माएँ शीघ्र ही मोक्षमार्ग प्रशस्त कर अभ्युदय को प्राप्त हो—ऐसी भावना मङ्गलायतन परिवार व्यक्त करता है।

षट्खण्डागम ग्रन्थ की चतुर्थ पुस्तक की वाचना सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन में प्रथम बार कीर्तिमान रचते हुए प्रथम श्रुतस्कन्ध **'षट्खण्डागम धवला टीका सहित'** वाचना का कार्यक्रम, मार्गशीर्ष पंचमी, शनिवार 5 दिसम्बर 2020 से अनवरत प्रारम्भ है। जिसकी प्रथम पुस्तक की वाचना का समापन 31 मार्च 2021 को; द्वितीय पुस्तक की वाचना का प्रारम्भ 01 अप्रेल से, समापन 08 जुलाई 2021 को; तृतीय पुस्तक की वाचना का प्रारम्भ 09 जुलाई 2021 तथा समापन 24 अक्टूबर 2021 को और चतुर्थ पुस्तक की वाचना का प्रारम्भ 25 अक्टूबर 2021 से 27 फरवरी 2022 को भक्तिभावपूर्वक सम्पन्न हुई।

विद्वान बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर तथा सहयोगी बहिनों एवं मंगलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त हुआ।

सम्पूर्ण 16 पुस्तकों की वाचना निरन्तर तीर्थधाम मंगलायतन से प्रवाहित होती रहे, ऐसी भावना आदरणीय पवनजी जैन की थी। जिसमें क्रमशः...

पंचम पुस्तक की वाचना 28 फरवरी 2022 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम - बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी बहिनों तथा मंगलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होगा।

दोपहर 01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**	
रात्रि 07.30 से 08.30 बजे तक	मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय	
08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्च्चारण सहित सामान्यार्थ**	

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,

Password - mang4321 के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

तीर्थधाम मंगलायतन से प्रकाशित एवं उपलब्ध साहित्य सूची

मूल ग्रन्थ–

1. समयसार वचनिका
2. प्रवचनसार (हिन्दी, अंग्रेजी)
3. नियमसार
4. इष्टोपदेश
5. समाधितंत्र
6. छहढाला (हिन्दी, अंग्रेजी सचित्र)
7. मोक्षमार्ग प्रकाशक
8. समयसार कलश
9. अध्यात्म पंच संग्रह
10. परम अध्यात्म तरंगिणी
11. तत्त्वज्ञान तरंगिणी
12. हरिवंशपुराण वचनिका
13. सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन

1. प्रवचनरत्न चिन्तामणि
2. मोक्षमार्गप्रकाशक प्रवचन
3. प्रवचन नवनीत
4. वृहद्द्रव्य संग्रह प्रवचन
5. आत्मसिद्धि पर प्रवचन
6. प्रवचनसुधा
7. समयसार नाटक पर प्रवचन
8. अष्टपाहुड़ प्रवचन
9. विषापहार प्रवचन
10. भक्तामर रहस्य
11. आतम के हित पंथ लाग!
12. स्वतंत्रता की घोषणा
13. पंचकल्याणक प्रवचन
14. मंगल महोत्सव प्रवचन
15. कार्तिकेयानुप्रेक्षा प्रवचन
16. छहढ़ाला प्रवचन
17. पंचकल्याणक क्या, क्यों, कैसे?
18. देखो जी आदीश्वरस्वामी
19. भेदविज्ञानसार
20. दीपावली प्रवचन
21. समयसार सिद्धि
22. आध्यात्मिक सोपान
23. अमृत प्रवचन
24. स्वानुभूति दर्शन
25. साध्य सिद्धि का अचलित मार्ग

पण्डित कैलाशचन्द्रजी का साहित्य

1. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला (भाग 1 से 7) (हिन्दी गुजराती)
2. मंगल समर्पण

अन्य

1. फोटो फ्रेम (पूज्य गुरुदेवश्री, बहिनश्री)

2. सी.डी.

3. मंगल भक्ति सुमन
4. मंगल उपासना
5. करणानुयोग प्रवेशिका
6. धन्य मुनिदशा
7. धन्य मुनिराज हमारे हैं!
8. प्रवचनसार अनुशीलन

बाल साहित्य (कॉमिक्स)

1. कामदेव प्रद्युम्न
2. बलिदान

आद. पवनजी की स्मृति में उपरोक्त साहित्य सभी मन्दिरों, ट्रस्ट, संस्थानों, विद्यालयों, पुस्तकालयों और साधर्मी भाई–बहिनों को स्वाध्यायार्थ निःशुल्क दिया जायेगा। सम्पर्क – सम्पर्कसूत्र – पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, 7581060200

Email : info@mangalayatan.com

– डाकखर्च आपका रहेगा।

चिदायतन सहयोग

-	परम शिरोमणी संरक्षक	रुपये 11.00 लाख
-	शिरोमणी संरक्षक	रुपये 05.00 लाख
-	परम संरक्षक	रुपये 02.00 लाख 51.00 हजार
-	संरक्षक	रुपये 01.00 लाख

तीर्थधाम चिदायतन संकुल में 206096.26 वर्ग फीट का निर्माण प्रस्तावित है। देव-शास्त्र-गुरु की उत्कृष्ट धर्मप्रभावना हेतु निर्मित हो रहे इस संकुल के निर्माण में आप एवं आपका परिवार, रुपये 2100.00 प्रति वर्ग फीट की सहयोग राशि प्रदान कर, तीर्थ निर्माण के सर्वोत्कृष्ट कार्य में सहभागी हो सकते हैं।

दानराशि में आयकर की छूट

भारत सरकार ने, श्री शान्तिनाथ-अकम्पन-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट को दान में दी जानेवाली प्रत्येक राशि पर, आयकर अधिनियम वर्ष 1961, 12-ए के अन्तर्गत धारा 80 जी द्वारा छूट प्रदान की गयी है।

नोट - आप अपनी राशि सीधे बैंक में जमा करा सकते हैं, अथवा निम्न नाम से Cheq./Draft भेज सकते हैं।

NAME	:	SHRI SHANTINATH AKAMPAN KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	PARIYAVALI, ALIGARH
A/C. NO.	:	7969002100000194
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0796900

उत्कृष्ट संवर-निर्जरावन्त मुनिराज

अहा! मुनिपना कैसा होता है, यह बात अज्ञानी को भी श्रद्धा में तो लेना चाहिए न? नवतत्त्व की श्रद्धा में संवर-निर्जरातत्त्व की श्रद्धा भी आती है। उत्कृष्ट संवर-निर्जरा के धारक मुनिराज होते हैं; इसलिए नवतत्त्व की श्रद्धा करना हो तो मुनि कैसे होते हैं - यह जानना चाहिए.... समकिती को नवतत्त्व की श्रद्धा में ऐसे संवर-निर्जरा की अर्थात् ऐसे मुनिपने की श्रद्धा होती है, परन्तु जो इनसे विपरीत हों, वे मुनि नहीं हैं और इस कारण उनकी श्रद्धा समकिती को नहीं होती।

शास्त्र में तो कहते हैं कि जिसके वस्त्र का एक धागा भी रखने की वृत्ति है, जो वस्त्र रखता है, उसे मुनि मानने और मनवानेवाले सब निगोद में जाएँगे - यह अष्टपाहुड़ में सूत्रपाहुड़ गाथा 18 में श्री कुन्दकुन्दाचार्य का कथन है, क्योंकि —

1. मुनि के वस्त्र-पात्र का संयोग होता ही नहीं, इसलिए मुनि को कौनसे अजीव का संयोग नहीं होता - इस बात का उसे पता नहीं है।

2. मुनि को वस्त्र-पात्र के ग्रहण की वृत्ति ही नहीं होती, इसलिए मुनि को ऐसा आस्रवभाव नहीं होता - यह भी उसे पता नहीं है।

3. मुनि को इतना उग्र संवर होता है कि उन्हें आहार-पानी के अतिरिक्त वस्त्र-पात्र ग्रहण करने की वृत्तिरूप आस्रव होता ही नहीं, उनको ऐसी संवरदशा होती है - इस बात का भी उसे पता नहीं है।

इस प्रकार उसकी अजीवतत्त्व में भूल, आस्रवतत्त्व में भूल और संवरतत्त्व में भी भूल है, इसी कारण उसकी सभी नवतत्त्वों में भूल है। **'तत्तो पुण जाइ णिग्गोदं'** - ऐसा बिना कारण कह दिया है, ऐसा नहीं है अर्थात् 'ककड़ी के चोर को फाँसी की सजा' - ऐसा नहीं है। विपरीत मान्यतावाला महा अपराधी है, उसको मूल में भूल है, नवतत्त्वों में भूल है।

(- प्रवचन-रत्न चिन्तामणि, 3/128-129)

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

आकाश जैसे निरालम्बी मुनि जैनधर्म के स्तम्भ :

अहो! कुन्दकुन्दस्वामी तो भगवान थे.... उन्होंने तो तीर्थङ्कर जैसा काम किया है.... और अमृतचन्द्राचार्य उनके गणधर जैसे थे। सन्तों ने महान आश्चर्यजनक कार्य किये हैं। अहो! आकाश जैसे निरालम्बी मुनि तो जैनधर्म के स्तम्भ हैं। निरालम्बी आत्मा का स्पर्श करके उनकी वाणी निकली है। ऐसे वीतरागी सन्तों का, चैतन्यपद को प्राप्त करानेवाला परम हित-उपदेश प्राप्त करके आत्मा को ऊपर ले जाना अर्थात् अन्तर्मुख होकर आत्मा की उन्नति करना ही जिज्ञासु आत्मार्थी जीवों का कर्तव्य है।

(- आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 518)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust

Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22

info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com